

वक्तव्य.



हालमें “ जैन जाति महोदय ” नामक ऐतिहासिक पुस्तक छपवाई जा रही है जिसके २५ प्रकरणों के अंदरमें यह तीसरा प्रकरण आपके करकमलोंमें उपस्थित है । इस प्रकरण के अंदर जैन महाजन मंच और उनकी शाखाएँ ओगवाल-पोरवाड और श्रीमाल जानियोंका प्रार्थन और प्रमाणिक इतिहास बड़ी ही साधुताके साथ सग्रह किया गया है । साधारण जनताके विशेष लाभार्थ इस प्रकरणकी १००० कोपी अलग बंधवाई गई है । अपनी जानिकी महत्त्वना और प्रार्थनता जानने के लिए प्रत्येक जैन भाईयों को एक कोपी अपने पास अवश्य रखना चाहिए.

अगर कोई मजन अपने भाईयों को प्रभावना देनी चाहे वह ऐसी ऐतिहासिक किताबों की प्रभावना दे कि जिनमें अपने पूर्वजोंका गौरव, आचार, विचार, आपस का प्रेम, मेक्यता, संगठनादि उच्च आदर्श का समाज में संचार हो सकें.

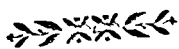
प्र. संशोधन आदि कारणोंसे खूबना रह गई हो तो पाठकालय हम करे. उदि ।

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प न. ८६

श्री रत्नप्रभसूरीश्वरपादपद्मेभ्यो नमः

अथ श्री

जैन जाति महोदय.



तीसरा प्रकरण.

नत्वा इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्र, पूजित पाद सदा सुखदाई ।
कैवल्यज्ञान दर्शन गुणधारक, तीर्थकर जग जोति तगाई ॥
करुणावंत कृपाके सागर, नलता नागको दीया बचाई ।
वामानन्दन पार्श्वजिनेश्वर, वन्दत 'ज्ञान' सदा चितलाई

(२)

पालित पश्चाचार अखण्डित, नौविध व्रतके धारी ।
करी निकन्दन चार कपायको, कछे कर पंच इन्द्रियप्यारी ॥
पञ्च मदाव्रत मेरु समाधर, सुमति पंच बडे उपकारी ।
गुप्ति तीन गोपि जिस गुरुको, प्रतिदिन वन्दित 'ज्ञान' आभारी

(३)

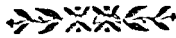
संस्कृत दिव घाणि प्राकृत, रची पट्टाबलि पूर्वधारी ।
तांको यह भाषान्तर हिन्दी, बाल लीखोको है सुखकारी ॥
सरल भाषाको चाहत दुनियो, परिश्रम मेरा है ।दतचारी ।
ओसबंस उपदेश गच्छते, प्रगत्यो पुण्य 'ज्ञान' नयदारी ॥

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प न. ८६

श्री रत्नप्रभसूरीश्वरपादपद्मेभ्यो नमः

अथ श्री

जैन जाति महोदय.



तीसरा प्रकरण.



नत्वा इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्र, पूजित पाद सदा सुखदाई ।
कैवल्यज्ञान दर्शन गुणधारक, तीर्थंकर जग जोति नगाई ॥
करुणाधंत कृपाके सागर, नलता नागको दीया बचाई ।
षामानंदन पार्श्वजिनेश्वर, बन्दत 'ज्ञान' सदा चितलाई

(२)

पालित पश्चाचार अखण्डित, नौविध ब्रह्मव्रतके धारी ।
करी निकन्दन चार कषायको, कब्जे कर पंच इन्द्रियप्यारी ॥
पञ्च महाव्रत मेरु समाधर, सुमति पंच बढे उपकारी ।
गुप्ति तीन गोपि जिस गुरुको, प्रतिदिन बन्दित 'ज्ञान' आभारी।

(३)

संस्कृत दिव वाणि प्राकृत, रची पट्टाघलि पूर्वधारी ।
तांको यह भाषान्तर हिन्दी, बाल लीखोको हैं सुखकारी ॥
सरल भाषाको चाहत दुनियो, परिभ्रम मेरा हैं ।दतचारी ।
ओसवंस उपदेश गच्छते, प्रगथ्यो पुण्य 'ज्ञान' नयकारी ॥

आपथी के पवित्र जीवन के विषय में किसी पट्टावलिकारने विशेष वर्णन न करते हुए यह ही लिखा है कि आप अपनी अन्तिमवस्था में शासन का भार आचार्य हरिदत्त सूरि के सिर पर रख आपथी सिद्धाचलती तीर्थपर एक मास का अनसन पूर्वक चरम श्वासोश्वास और नाशमान शरीर का त्याग कर अनंत सुखमय मोक्ष मन्दिरमें पधार गये इति पार्व्वनाथ प्रभुके प्रथम पट पर हुवे आचार्य शुभदत्तसूरि ।

(२) आचार्य शुभदत्त सूरि मोक्ष पधार जाने पर सूर्य और चन्द्र इन दोनों का प्रकाश अस्त हो जानेसे श्री संघमें बहुत रज हुआ तत्पश्चात् आचार्य हरिदत्तसूरि को संघ नायक नियुक्त कर सकल संघ उन सूरिजी की आज्ञा को सिरोद्धारण करते हुवे आत्म कल्याण करने में तत्पर हुवे आचार्य श्री श्रुत समुद्र के पारगामी, षचन लब्धि, देशनामृत तूल्य, उपशान्त जीतेन्द्रिय यशस्वी परोपकार परायणादि अनेक गुण संयुक्त सूर्य चन्द्र के अभाव दीपक की परे उपोत करते हुवे भूमण्डल में विहार करने लगे । दूमरी तरफ यज्ञहोम करनेवालों का भी पग पसारा विशेष रूप में होने लगा हजारो लाखो निरापराधी पशुओं का बलीदान से स्वर्ग बतलानेवालों की सख्या में वृद्धि होने लगी परिग्राजक प्रव्रजित सन्यासी लोगोंने इसके विरुद्ध में खडे हो यज्ञ में हजारो लाखों पशुओं का बलिदान करना धर्म विरुद्ध निष्कृत कर्म बतला रहे थे आचार्य हरिदत्तसूरि के भी हजारो मुनि भूमण्डल पर अहिंसापरमो धर्म का झंडा फरका रहे थे एक समय विहार करते हुवे आचार्य श्री अपने ५०० मुनियों के परिवार से स्वस्तिनगरी के उद्यान में पधारे घटा का राजा अदीनशत्रु नागरिक घडे ही आडम्बरसे सूरिजी को वन्दन करने

मान् श्रूपभद्रेष घ नेमिनाथ पार्श्वनाथ के नामोंका उल्लेख है (देखो वेदोंकी श्रुतियों पहला प्रकरण में) वेदान्तियोंने भी जैनतीर्थ-हरोंको नमस्कार किया है राजा भरत-सागर दशरथ रामचंद्र श्रीकृष्ण कौरवपाण्डु यह सब महा पुरुष जैन ही थे जैन लोग ईश्वरको नहीं मानते यह कहना भी मिथ्या है जैसे ईश्वरका उच्चपद और श्रेष्ठता जेनोंने मानी है वसी किसीने भी नहीं मानी है । अन्य लोगोंमें कितनेक तो ईश्वर को जगत्का कर्ता मान ईश्वरपर अज्ञानता निर्दयताका कलंक लगाया है कितनेकोंने सृष्टिको भंगार और कितनेकोंने पुत्री-गमनादिके कलंक लगाया है जैन ईश्वरको कर्ता कर्ता नहीं मानते हैं पर सर्वज्ञ शुद्धात्मा अनंतज्ञान दर्शनमय मानते हैं निरञ्जन निराकार निर्घिकार ज्योती स्वरूप सकल कर्म रहित ईश्वर पुनः पुनः अवतार धारण न करे इत्यादि वादविवाद प्रश्नोत्तर होता रहा अन्तमें लोदिताचार्य को सद्ज्ञान प्राप्त होनेसे अपने १००० शिष्यों के साथ आप आचार्य हरिदत्त-सूरि के पास जैन दीक्षा धारण करली इसके साथ सेकड़ों हजारों लोग जो पहलेसे यत्नसे प्राप्त हुये सूरिजीका सद्ज्ञानसे प्रतिबोध पाके जैनधर्मको स्वीकार कर लीया । क्रमशः लोदितादि मुनि आचार्य हरिदत्तसूरि के चरणकमलों में रहते हुये जैन सिद्धान्त के पारगामी हो गये तत्पश्चात् लोदित मुनिको गणिपदसे विभूषित कर १००० मुनियोंसे साथ दे दक्षिण की तरफ विहार बरवा दीया, कारण यहां भी पशुश्रमका बहुत प्रचार था आपधी अर्दिता परमो धर्मका प्रचार में बड़े ही धिमान और समर्थ भी थे आचार्य हरिदत्तसूरि विरकाल पृथ्वीमण्डल पर विहार कर अनेक आत्माओं का उत्तार भीया आपधी अपना अग्निसंस्थाका

समय नजदीक ज्ञान अपने पदपर आर्य समुद्रमूरिको
कर आप २१ दिनका अनशन पूर्णक वैभारगिरके उपर
नाशमान शरीरका त्याग कर स्वर्ग विधारे। इति दू १

३ आचार्य हरिदत्तसूरिके पट आर्य समुद्रमूरि
प्रभाविक विद्याओं और श्रुतज्ञानके समुद्रही थे आपके शासन
कालमें भी यज्ञयादियोंका प्रचार था हजारा लार्गों न। १
पशुओंके कोमल कण्ठपर निर्दय देव्य लूग चलानेमें और धर्मका
नामसे मांस मदिराकी आचरणामें ही दुनियोंको जालमें कमा
रहे थे आचार्यश्री के विशाल मर्यामें मुनि समुदाय पूर्व बंगाल
ऊटीमा पञ्जाब मुल्तानादि जिन २ देशमें विहार करते थे
उस २ देशमें अहिंसाका म्बुव प्रचार कर रहे थे उधर लोहित-
गणि दक्षिण करणाट तन्म महाराष्ट्रियादि देशोमें विहार
कर अनेक राजा महाराजाओं कि राजसभामें उन पशुहिंसकों
का पराजय कर जनधर्मका अडा करका रहेये आपके उपासक
मुनिगणकि संख्या का।षन् २,००० तक हा गइ यो दक्षिणमें
अन्योन्य मनके आचार्यों का देग्न दक्षिण जनसंघ लोहित
गणिको इसपद के योग्य समज आचार्य आर्यसमुद्रमूरि दि
सम्प्रति मगयाके अल्ला दिन शुभ मूर्तमें लोहितगणि क
आचार्य पछिसे मृपित क्रिये जिससे दक्षिण विहारी मुनि
योकी लोहित माया श्रीर उतर मरतमें विहार करनेवाले
मुनियोंकी निर्ग्रन्थ समुदाय के नामसे ओरगाने लगीं कींती
अपण समुदायोंने हासमें धर्मदर लेकर उतरसे दक्षिणतक
जनधर्मका इस कहर प्रचार कर दिया कि वेदाभित्तियोंका म्बुव
अपनाचर पर चढेजानेमें नाममात्र के रह गये थे.

आर्यसमुद्रमूरि का पक्ष विदेशी नामका महा प्रभाविक

अतिशय ज्ञानेद्र मुनि ५०० मुनियों के साथ विहार करता अवंति (उजैन) नगरी के उद्यानमें पधारे वहांका राजा जयसेन था अनंगसुन्दरी राणि तथा उसका करीबन् १० वर्षका पुत्र केशीकुमारादि और नागरिक मुनिभीको घन्दन करनेको आये. मुनिजीने संसार तारक दुःखनिवारक और परम वैराग्यमय देशना दी देशना श्रवणकर यथाशक्ति व्रत नियम कर परिषदा मुनिको घन्दन कर विसर्जन हुई पर राजकुमर केशीकुमर पुनः पुन मुनिभी के सन्मुख देखता वहांडी बैठा रहा फिर प्रश्न किया कि हे करुणासिन्धु ! मैं जैसे जैसे आपके लामने देखता हूँ जैसे जैसे मेरेको अत्यन्त हर्ष-रोमांचित हो रहा है वैसा पूर्वमें कबी किसी कार्य में न हुवा था इतना ही नहीं पर आप पर मेरा इतना धर्म प्रेम हो गया है कि जिस्को मैं जबानसे कहनेमें भी असमर्थ हु ।

मुनिभीने अपना दिव्यज्ञान द्वारा कुमर का पूर्व भव देखके कहा कि हे राजकुमर । तुमने पूर्वभवमें इस जिनेन्द्र दीक्षा का पालन कीया है वास्ते तुमको मुनिवेष पर राग हो रहा है । कुमरने कहा क्या भगवान् ! सच्चही मेरा जीवने पूर्वभव में जैन दीक्षा का सेवन कीया है ? इसपर मुनिने कहा कि हे राजकुमार । सुन इस भारत वर्ष के धनपुर नगरका पृथ्वीधर राजा की सौभाग्यदेविके सात पुत्रियों पर देवदत्त नामका कुमार हुआ था वह बाल्यावस्थामें ही गुणभूषणाचार्य पास दीक्षा ले चिरकाल दीक्षापाल अन्तमें सामाधिपूर्वक काल-कर पंचवा प्रणस्यर्गमें देव हुआ वहांसे चव कर तुं राजा का पुत्र केशी कुमार हुआ है यह सुन कुमर को उदापोद करती ही नातिस्मरण ज्ञानोत्पन्न हुआ जिससे मुनिने कहा था वह आप प्रत्यक्ष ज्ञान के जरिये सब आदेहुय देखने लग गया वस फिर

के बाद विवादमें आत्मशक्तियोंका दुरुपयोग होने लगा. यज्ञ क्रम और पशु हिसकों का फिर जोर बढने लगा धार्मिक और सामाजिक श्रृंखलनायेंमें भी परावर्तन होने जगा.

यद्य सब हाल उत्तर भरतमें रहे हुवे केशीश्रमणाचार्यने सुना तय दक्षिण भरतमें विहारकरनेवाले मुनियोंको अपने पास बुलवा लिया अथपि कितनेक मुनि रह भी गये थे. दक्षिणविहारी मुनि उत्तरमें आने पर कुच्छ अरसा के बाद वहां भी यह ही हालत हुई कि जो दक्षिणमे थी। इधर आचार्यश्री घर की बिगड़ी सुधारने में लग रहे थे उधर पशुहिसक यज्ञवादीयोंने अपना जोर को बढानेमे प्रयत्नशील बन यज्ञका प्रचार करने लगें. घरकी फूटका यह परिणाम हुआ कि एक पिहित मुनिका शिष्य जिस्का नाम बुद्धकीर्ति था उसने समुदायसे अपमानित हो जैन धर्मसे पतित हो अपना बौद्ध नामसे बौद्ध धर्म का प्रचार करना शरु किया। बुद्ध कीर्तिने अपने धर्म के नियम एसे बिधे और सरल रखे कि हरेक साधारण मनुष्य भी उसे पाल सके बन्धन तो वह किसी प्रकारका

१ जैन श्वेताम्बर आम्नाय के आचाराग सूत्र कि टीकामें बुद्ध धर्म का प्रवर्तक मुल पुरुष बुद्धकीर्ति पार्श्वनाथ तीर्थ में एक साधु था जिसने बौद्ध धर्म चलाया.

२ दिगम्बर आम्नायका दर्शनमार नामका ग्रन्थमें लिखा है कि पार्श्वनाथ के तीर्थ मे पिहित मुनिका शिष्य बुद्धकीर्ति साधु जैन धर्म से पतित हो मांस मट्टि आचारण करता हुआ अपना नामसे बौद्ध धर्म चलाया है

३ बौद्ध ग्रन्थोंमें लिखा है कि बुद्ध एक राजा शुद्धोदोत का पुत्र था वह तापसों के पास दीक्षा लीथी बोधि होनेके बाद अहिंसा धर्म का खुब प्रचार कीया ॥ इसका समय भगवान् महावीर के समकालिन माना जाता है कुच्छ भी हो. बुद्धने जैनसे अहिंसा धर्म की शिक्षा जरूर पाई थी

बादविषादमें आत्मशक्तियोंका दुरुपयोग होने लगा. यज्ञ और पशु हिंसकों का फिर जोर बढने लगा धार्मिक सामाजिक श्रृंखलनार्योमें भी परावर्तन होने जगा.

यद्य सब हाल उत्तर भरतमें रहे हुवे केशीश्रमणाचार्यने तब दक्षिण भरतमें विहारकरनेवाले मुनियोंको अपने स बुलवा लिया अथपि कितनेक मुनि रह भी गये थे. दक्षिणविहारी मुनि उत्तरमें आने पर कुच्छ अरसा के बाद हां भी बह ही टालत हुई कि जो दक्षिणमे थी। इधर आचा- श्री घर की घिगडी सुधारने में लग रहे थे उधर पशुहिंसक ज्ञवादीयोने अपना जोर को बढानेमे प्रयत्नशील बन यज्ञका चार करने लगें. घरकी फूटका यह परिणाम हुवा कि एक पिहित मुनिका शिष्य जिस्का नाम बुद्धकीर्ति था उसने समुदायसे पमानीत हों जैन धर्मसे पतित हो अपना बौद्ध नामसे बुद्ध धर्म का प्रचार करना शरु किया। बुद्ध कीर्तिने अपने धर्म के नियम पसे मिधे और सरल रखे कि दरेक साधारण मनुष्य भी उसे पाल सके बन्धन तो बह किसी प्रकारका

१ जैन श्वेताम्बर आम्नाय के आचाराग सूत्र कि टीकामे बुद्ध धर्म का वर्तक मुल पुरुष बुद्धकीर्ति पार्श्वनाथ तीर्थ में एक साधु या जिसने बौद्ध धर्म चलाया.

२ दिगम्बर आम्नायका दर्शनमार नामका ग्रन्थमें लिखा है कि पार्श्वनाथ के तीर्थ मे पिहित मुनिका शिष्य बुद्धकीर्ति साधु जैन धर्म से पतित हो मास मट्टि आचारण करता हुवा अपना नामसे बौद्ध धर्म चलाया है

३ बौद्ध ग्रन्थोंमें लिखा है कि बुद्ध एक राजा शुद्धोदित का पुत्र था वह पसो के पास दीक्षा लीथी बोधि होनेके बाद अहिंसा धर्म का खुब प्रचार किया था इसका समय भगवान् महावीर के समकालिन माना जाता है कुच्छ भी बुद्धने जैनोंसे अहिंसा धर्म की शिक्षा जरूर पाई थी

के वादविवादमें आत्मशक्तियोंका दुरुपयोग होने लगा. यज्ञ कर्म और पशु हिंसकों का फिर जोर बढ़ने लगा धार्मिक और सामाजिक श्रृंखलनायेंमें भी परावर्तन होने जगा.

यद्यत्तु सब हाल उत्तर भरतमें रहे हुवे केशीश्रमणाचार्यने सुना तब दक्षिण भरतमें विहारकरनेवाले मुनियोंको अपने पास बुलवा लिया अद्यपि कितनेक मुनि रह भी गये थे. दक्षिणविहारी मुनि उत्तरमें आने पर कुच्छ अरसा के वाद वहां भी यद्यत्तु ही टालत हुई कि जो दक्षिणमें थी। इधर आचार्यश्री घर की दिगड़ी सुधारने में लग रहे थे उधर पशुहिंसक यज्ञवादीयोंने अपना जोर को बढ़ानेमें प्रयत्नशील बन यज्ञका प्रचार करने लगे. घरकी फूटका यद्यत्तु परिणाम हुआ कि एक पिहित मुनिका शिष्य जिस्का नाम बुद्धकीर्ति था उसने समुदायसे अपमानित हो जैन धर्मसे पतित हो अपना बौद्ध नामसे बौद्ध धर्म का प्रचार करना शरु किया। बुद्ध कीर्तिने अपने धर्म के नियम वसे निधे और सरल रखे कि हरेक साधारण मनुष्य भी उसे पाल सके बन्धन तो वह किसी प्रकारका

१ जैन श्रेताम्बर आम्नाय के आचाराग सूत्र कि टीकामें बुद्ध धर्म का प्रवर्तक मुल पुरुष बुद्धकीर्ति पार्श्वनाथ तीर्थ में एक साधु था जिसने बौद्ध धर्म चलाया.

२ दिगम्बर आम्नायका दर्शनसार नामका ग्रन्थमें लिखा है कि पार्श्वनाथ के तीर्थ में पिहित मुनिना शिष्य बुद्धकीर्ति साधु जैन धर्म से पतित हो भात मधि आचाराग करता हुआ अपना नामसे बौद्ध धर्म चलाया है

३ बौद्ध ग्रन्थोंमें लिखा है कि बुद्ध एक राजा शुद्धोदन का पुत्र था वह तापतो के पास दीक्षा लीधी बोधि होनेके बाद अहिंस धर्म का एव प्रचार कीता ग इसका समर भगवान् महावीर के समकालिन मना जाता है बुद्ध की ही. बुद्धने जेनोंसे अहिंसा धर्म की निष्ठा कर ५१ की

मुनियोका विहार करवा के आप एक हजार मुनियोंके साथ
मागध देशमें विहार कर पशुबलि करनेवाले यज्ञ और
मांसभक्षण करनेवाले ब्रौह्मों के सामने खड़े हो गये

आपथ्री के परम पुरुषार्थ का यह फल हुवा कि राजा
चेटक-सतानिक दधिषाहन सिद्धार्थ-विजयसेन चन्द्रपाल
अदिनशत्रु प्रसन्नजीत और राता प्रदेशी आदि अनेक राजा
महाराजाओं और लाखो मनुष्यों को पतित दशासे उद्धार
कर पवित्र जैनधर्म के उपासक बना दीये थे.

आजकल इतिहास शोधखोल से पता मिलता है कि वह
जमाना बड़ा दि विकट था आपुन के धर्म वाद के लिये
स्थान स्थानपर मोरचा बन्धी हो रही थी। आत्मकल्याण
करने कि जो आत्म शक्तियोंकी उनका दुरुपयोग वाद-विवाद
में होता था अज्ञानताका का साम्राज्य था जनता मे बड़ा भारी
कोलाहल मच रहा था इत्यादि कुदरत एक पता महा पुरुष
की प्रतीक्षा कर रही थी कि जिसकी परमावश्यकता थी—

इसी समय में जगदुत्तारक श्रीलोकती नाथ शान्तिका
समुद्र चरमतीर्थकर भगवान महावीर प्रभुने अवतार धारण
कीया संक्षिप्त में -क्षत्रीकुण्ड नगर का राजा सिद्धार्थ कि त्रिशलादे
राणि की पवित्र रत्न कुक्षी में भगवान् महावीरने अवतार
लीया। जन्म समय छप्पन दिगुकुमारीकाओंने सूतिका कर्म
किया सौधर्मादि चौतठ इन्द्रोंने सुमेरुगिरिपर भगवान का
जन्म महोत्सव किया. भगवान् ३० वर्ष गृहवास में रहे एक
पुत्री हुई यह जमालि क्षत्री कुमारको व्याही थी अन्तमें गृहा
वस्थामें एक वर्ष तक वर्षादान दीया तत्पश्चात् इन्द्रनेरेन्द्रो के
महोत्सवपूर्वक आपने दीक्षा धारण करी १२॥ वर्ष घोर तप-

मुनियोका विहार करवा के आप एक हजार मुनियोके साथ
 मागध देशमें विहार कर पशुवलि करनेवाले यज्ञ और
 मांसभक्षण करनेवाले बौद्धों के सामने खड़े हो गये

आपश्री के परम पुरुषार्थ का यह फल हुवा कि राजा
 चेटक-सतानिक दधिवाहन सिद्धार्थ-विजयसेन चन्द्रपाल
 अदिनशत्रु प्रसन्नजीत और राजा प्रदेशी आदि अनेक राजा
 महाराजाओं और लाखो मनुष्यों को पतित दशासे उद्धार
 कर पवित्र जैनधर्म के उपासक बना दीये थे.

आजकल इतिहास शोधखोल से पता मिलता है कि वह
 जमाना बड़ा ही विकट था आपुस के धर्म वाद के लिये
 स्थान स्थानपर मोरचा बन्धी हो रही थी। आत्मकल्याण
 करने कि जो आत्म शक्तियोथी उनका दुरुपयोग वाद-विवाद
 में होता था अज्ञानताका का साम्राज्य था जनता मे बडा भारी
 कोलाहल मच रहा था इत्यादि कुदरत एक पसा महा पुरुष
 की प्रतीक्षा कर रही थी कि जिसकी परमावश्यक थी—

इसी समय में जगदुद्धारक श्रीलोकी नाथ शान्तिका
 समुद्र चरमतीर्थकर भगवान महावीर प्रभुने अवतार धारण
 कीया संक्षिप्त में-क्षत्रीकुण्ड नगर का राजा सिद्धार्थ कि विशलादे
 राणि की पवित्र रत्न कुक्षी में भगवान् महावीरने अवतार
 लीया। जन्म समय एप्पन दिगु्कुमारीकाओंने सूतिका कर्म
 किया सौधर्मादि चौमठ इन्द्रोंने सुमेरुगिरिपर भगवान का
 जन्म महोत्सव किया. भगवान् ३० वर्ष गृहस्थास में रहे एक
 पुत्री हुई यह नामालि क्षत्री कुमारको व्याही थी अन्तमें गृहा
 वस्थामें एक वर्ष तक वर्षादान दीया तत्पश्चात् इन्द्रनेरेन्द्रों के
 महोत्सवपूर्वक आपने दीक्षा धारण करी ६२॥ वर्ष घोर तप-

उद्देश्यानुसार यहाँ महावीर भगवान् का सबन्ध यहीं समा कर आगे जैनजाति के वारामे ही मेरा लेख प्रारभ करता हूँ

भगवान् केशीश्रमणाचार्यने जैनधर्म का अच्छी तरकी दी अन्तिमावस्थ में आप अपने पाट पर स्वयंप्रभ नामके मुनिकों स्थापनकर एक मासका अनशन पूर्वक सम्मेतशिखर गिरिपर स्वर्ग को प्रस्थान किया इति पार्व्वनाथ भगवान् का चतुर्थ पाट हुवा ।

(५) केशीश्रमणाचार्य के पट्ट उदयाचल पर सूर्य के समान प्रकाश करनेवाले आचार्य स्वयंप्रभसूरि हुए आपका जन्म विद्याधर कुलमें हुआथा. आप अनेक विद्याओं के पारगामी थे स्वपरमत्त के शास्त्रों में निपुण थे आपके आज्ञावर्ति हजारों मुनि भूमण्डल पर विहार कर धर्म प्रचार के साथ जनताका उद्धार कर रहेथे इधर भगवान् वीरप्रभुकी सन्तान भी कम संख्यामें नहीं थी भगवान् महावीर का संटेली उपदेशसे ब्राह्मणोंका जोर और यज्ञकर्म प्राय. नष्ट हो गया था तथापि मरू स्थल जैसे रेतीले देशमें न तो जंत पहुँच सके थे और न बौद्ध भी यहा आस के थे वास्ते यहां घाममार्गियो का बडा भारी तौरशौर था. यज्ञ होम और भी बटे बडे अत्याचार हो रहे थे धर्म के नामपर दुराचार व्यभिचार का भी पोषण हो रहा था कुण्डापन्थ का चलीयापथ यह घाममार्गियो की शाखाए थी देवीशक्ता के यह उपासक थे इस देशके राजा प्रजा प्रायः सब इसी पन्थके उपासक थे उस समय भारघाट मे धीमात्तनामह नगर उन घाममार्गियोका केन्द्रस्थान गीना जाता था.

आचार्य स्वयंप्रभसूरि के उपासक जैसे स्टेपर मूखर मनुष्य विद्याधर थे वैसे ही देवि देवता भी थे यह भी समय

विद्वान् शिष्यो को साथ ले सिधे ही राज सभामें गये जहां पर प्रज्ञ सम्बंधि सब तैयारीया और सलार्घो हो रही और घटे घटे हटाधारी सिरपर त्रिपुंड्र भस्म लगाये हुवे गलेमें जीनौउके तागे पडे हुवे मांस लुब्धक ब्राह्मणाभास बैठे थे आचार्यश्रीका अतिशय तप तेज इतना तो प्रभावशाली था कि सूरिजीका आते हुवे देखते ही राजा जयसेन आसनसे उठ खडा हुवा कुच्छ सामने आके नमस्कार किया सूरिजीने “ धर्म लाभ ” दीया उसपर वहां बैठे हुवे ब्राह्मण लोग हंसने लगे. राजाने पहिले कभी धर्मलाभ शब्द कानोंसे सुनाही नहीं था वास्ते सूरिजी से पूच्छा कि हे प्रभो ! यह धर्मलाभ क्या वस्तु है क्या आप आशीर्वाद नहीं देते हो जैसे हमारे गुरु ब्राह्मण लोग दीया करते हैं । इसपर सूरिजीने कहा:—

...

..

.

..

हे राजन् कितनेक लोग दीर्घायुष्य (चिरंजीवो) का आशीर्वाद देते हैं पर दीर्घायुष्य नरकमें भी होते हैं कितनेक बहु पुत्र का आशीर्वाद देते हैं वह कुकर कुर्कटादिके भी बहु पुत्र होते हैं पर जैनमुनियोंका धर्मलाभ तुमारा सर्व सुख अर्थात् इस परलोकमें तुमारा कल्याण के लिये है यह विद्वत्तामय शब्द सुन राजाको अतिशय आनंद हुवा राजाने सूरिजीका आदर सत्कार कर आसनपर घिराजने कि अर्ज करी सूरिजी अपनी कामवली विचाके घिराज गये उस समय के राजा लोगो को धर्म श्रवण करने का प्रेम था राजाने नम्रता पूर्वक सूरिजीसे अर्ज करी कि हे भगवान् ! धर्मका क्या लक्षण है किस धर्म से जीव जन्म मरण के दु खोसे निवृत्ति पाता है ? सूरिजीने समय पाके कहा कि:—

यज्ञार्थं पशवः सृष्टाः स्वयमेव स्वयं भुधाः ।

यज्ञोस्य भुक्त्यै सर्वस्य तस्माद्यज्ञे षधोऽवधः ॥

भावार्थ—ईश्वरने यज्ञ के लिये ही सृष्टिमें पशुओं को पैदा
या है जो यज्ञ के अन्दर पशुओं कि बलि दी जाती है
सब पशु योनिका दुःखोंसे मुक्त हो सिधे ही स्वर्गमें चले
ते हैं और यज्ञ करनेसे राजा प्रजा में शान्ति रहती है।

सूरिजीने कहा अरे मिथ्यावादियों तुम स्वल्पसा स्वार्थ
प्राप्त भक्षण) के लिये दुनियों को मिथ्या उपदेश दे दुर्गति
पात्र क्यों बनते हो अगर यज्ञमें बलिदान करनेसे ही
गर्ग जाते हैं तो

“ निहतस्य पशोर्यज्ञे । स्वर्गं प्राप्तिर्यदीष्य ते ।

स्वपिता यजमानेन । किन्तु तस्मान्न हन्यते ॥ ”

भावार्थ—अगर स्वर्गमें पहुँचाने के हेतु ही पशुओंको यज्ञमें
मरते हो तो तुमारे पिता बन्धु पुत्र स्त्रिको स्वर्ग क्यों नहीं
हुँचाते हों अथवा यजमान को बलि के जरिये स्वर्ग क्यों
ही भेजते हो अरे पाखण्डियों अगर ऐसे ही स्वर्ग मीलती
तो फीर क्या तुमको स्वर्ग के सुख प्रीय नहीं हैं देखिये
। ख क्या कहता है।

“ यूषं कृत्वा पशुन् हत्वा । फुत्वा रूधिर कर्दमम् ।

यथेव गम्यते स्वर्गं । नरके केन गम्यते ॥ ”

• विचारा पशु उन निर्दय दैत्यो प्रति पुकार करते है कि

“ नाह स्वर्गं फलोपभोग तुष्टितो नाभ्यार्थि तस्त्वकाया, ।

सतुष्ट रतृण भक्षणेन सतत साधो न दुक्त तत्र ॥

स्वर्गं यान्ति यदत्वया विनिहिता यज्ञे ध्रुव प्राणिनो ।

यज्ञ किं न करोपि मातृपितृभि पुनैन्तया यान्धव ॥



करदों कि कोई भी शक्त कीसी प्राणिको मारेगा उसे प्राणि के बदले अपना प्राण देना पड़ेगा. राजा अहिंसा भगवती का परमोपासक बन गया । फिर आचार्यजीने जैनधर्म का स्वरूप मुनि या श्रावक धर्म का वर्णन कर विस्तारपूर्वक सुनाया फल यह हुआ की वहांपर ९०००० घरों वालोने जैन धर्म को स्वीकार कर आचार्यश्री के चरणोपासक बन गये. आगे चलकर इस श्रीमालनगर के जैन लोग अन्योन्य नगरमें निघास कीया तब नगर का नामसे इन जैनों की श्रीमाल जाति प्रसिद्ध हुई-

श्रीमालनगरके लोगोने सूरिजीसे अर्ज करी कि हे कर्णा-सिन्धु । आप के यहाँ पधारनेसे हजारो लाखो पशुओं को अभयदान मीला और क्रूर कर्मरूपि मिथ्यामत्त सेवन कर नरकमे जाने वाले जीवों को सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ति हुई स्वर्ग मोक्ष का रहस्ता मीला अर्हन्त धर्म की बडी भारी प्रभावना हुई आप का परमोपकार का बदला इस भवमें तो क्या पर भवो भवमें देना हमारे लिये अशक्य है आपकी सेवा उपासना क्षणभर भी छोडनी नही चाहते हैं तद्यपि एक अरज करना हम बहुत जरूरी समजते हैं वह यह है की आवु के पास पद्मावती नामकी नगरी है वहाँका राजा पद्मसेनने भी देवी के उपद्रव को शान्ति करने के हेतु अश्व मेघ यज्ञ का प्रारंभ कीया है कल पूर्णिमा का वह यज्ञ है अगर यहाँ पर आप श्रीमानों के पधारना हो जाय तो जैसा यहाँ लाभ हुआ है वैसा ही वहाँ भी उपकार है । सूरिजीने इस बात को सहर्ष स्वीकार करलि और संघ को कह दीया की हम कलशुभे ही पद्मावती पहुंच जावेगे. गृहस्थ लोगोने

भावार्थ—जिस समय रामचन्द्रजी लंकाका विध्वंस किया उस समय हमारे पूर्वज चन्द्रचुड विद्याधरोका नायक साथमें था अन्योन्य पदार्थोंके साथ रावणके चैत्यालयसे लीलापत्राकी पार्श्वनाथ प्रतिमा वैताव्यगिरिपर ले आये थे वह क्रमशः आज मेरे पास है और मुझे पता अटल नियम है कि मैं उस प्रतिमाका दर्शन सेवा कीयों वगर अन्न जल नहीं खाता हूँ मेरी इच्छा है कि भगवान् की प्रतिमा साथमे रख कर दीक्षा ले भावपूजा करता हुवा मेरा पूर्व नियमको अखण्डत-पर्यन्त रखु । आचार्यश्रीने अपना श्रुतज्ञानद्वारा भविष्यका लाभ-लाभपर विचार कर फरमाया कि “ जहां सुखम् ” इसपर रत्नचुड विद्याधरोका राजा बडा भारो दर्प मनाता हुंवा अपने वैमानवासी पांचसो विद्याधरो के साथ दीक्षा लेनेको तय्यार हो गये.

“ गुरुणा लाभं ज्ञात्वा तस्मै दीक्षा दत्त्वा ”

शेष विद्याधर दीक्षाका अनुमोदन करते हुवे श्री शङ्ख-पाद्री तीर्थों की यात्रा कर वैताव्यगिरिपर जाके सब समाचार कहा तत्पश्चात् रत्नचुडराजा के पुत्र कनकचुड को राजगद्दी बैठाया और वह सहकुटम्ब आचार्यश्री को वन्दन करनेको आये रत्नचुड मुनिका दर्शनकर पहला तो उपालंभ दीये बाद चारित्र्य का अनुमोदन कर देशना लुन वन्दन नमस्कार कर विसर्जन हुवे । रत्नचुड मुनि क्रमशः गुरु महाराज का धिनय सेवाभक्ति करते हुवे “ क्रमेण द्वादशांगी चतुर्दश पूर्वी वभूव ” कहने कि आवश्यकता नहीं है पहला तो आपका जन्म ही विद्याधर वंशमे दूसरा आप विद्याधरो के राजा तीसरा विद्यानिधि गुरुके चरणारविन्द की सेवा कि फिर कभी -

भावार्थ—जिस समय रामचन्द्रजी लंकाका विध्वंस किया था उस समय हमारे पूर्वज चन्द्रचुड विद्याधरोका नायक भी साथमें था अन्योन्य पदार्थोंके साथ रावणके चैत्यालयसे शीलापत्ताकी पार्श्वनाथ प्रतिमा वैताद्व्यगिरिपर ले आये थे वह क्रमशः आज मेरे पास है और मुझे पता अटल नियम है कि मैं उस प्रतिमाका दर्शन सेवा कीयों वगर अन्न जल नहीं लेता हूँ मेरी इच्छा है कि भगवान् की प्रतिमा साथमें रख दीक्षा ले भावपूजा करता हुआ मेरा पूर्व नियमको अखण्डित-पने रखु । आचार्यश्रीने अपना श्रुतज्ञानद्वारा भविष्यका लाभालाभपर विचार कर फरमाया कि “ जहां सुखम् ” इसपर रत्नचुड विद्याधरोका राजा बड़ा भारी हर्ष मनाता हुआ अपने वैमानवासी पांचसौ विद्याधरो के साथ दीक्षा लेनेको तय्यार हो गये.

“ गुरुणा लाभं ज्ञात्वा तस्मै दीक्षा दत्त्वा ”

शेष विद्याधर दीक्षाका अनुमोदन करते हुवे श्री शत्रुंज-यादि तीर्थों की यात्रा कर वैताद्व्यगिरिपर जाके सब समाचार कहा तत्पश्चात् रत्नचुडराजा के पुत्र कनकचुड को राज गादी वेठाया और वह सहकुटम्ब आचार्यश्री को वन्दन करनेको आये रत्नचुड मुनिका दर्शनकर पहला तो उपालम्भ दीये बाद चारित्र्य का अनुमोदन कर देशना लुन घन्दन तमस्कार कर विसर्जन हुवे । रत्नचुड मुनि क्रमशः गुरु महाराज का विनय सेवाभक्ति करते हुवे “ क्रमेण द्वादशांगी चतुर्दश पूर्वी वभूव ” कहने कि आवश्यकता नहीं है पहला तो आपका नन्म ही विद्याधर वंशमें दूसरा आप विद्याधरो के राजा तीसरा विद्यानिधि गुरुके चरणार्थिद की सेवा कि फिर कभी कीस

हुवे दोनो आचार्यों की आज्ञावृत्ति हजारो मुनियों पृथ्वीमण्डल पर विहारकर जैनधर्मका खुब प्रचार कर रहेथे यज्ञवादियों का जोर बहुत दृष्ट गया था पर बौद्धोका प्रचार आगे बढ़ रहाथा केइ राजाओने भी बौधधर्म स्वीकार करलीया था तथपि जैन जनताकी संख्या सबसे विशाल थी. इसका कारण जैनमुनियो कि विशाल संख्या और प्रायः सब देशोमे उनका विहार था दूसरा जैनोका तत्त्वज्ञान और आचार व्यवहार सबसे उच्च कोटीका था जैन और बौद्धोका यज्ञनिषेध के विषय उपदेश मीलता जुलताही था वेदान्तिक प्रायः लुप्तसा हो गये थे. जैन और बौद्धोके घाद विवाद भी हुवा करता था.

आचार्य रत्नप्रभसूरि एकदा सिद्धगिरि की यात्रा कर सध के साथ आर्षुदाचल की बात्रा करी वहांपर रात्रिमें चक्रेश्वरी देवीने सूरिजीको विनंति करीकी है दयानिधि ? आपके पूर्वजोने मरुभूमि मे विहार कर अनेक भव्योका कल्याण कर असंख्यात पशुओंकी बलिरूपी ' यज्ञ ' जैसे मिथ्यात्व को समूलसे नष्ट कर दीया पर भवितव्यता वसात् वह श्रीमालनगरसे आगे नहीं बड सके वास्ते अर्ज है कि आप जैसे समर्थ महात्मा उधर पधारे तो बहुत लाभ होगा ? सूरिजीने देविकी विनंति को स्वीकार कर कदा की ठीक है मुनियों को तों जहां लाभ हो वहांही विहार करना चाहिये इत्यादि सन्मानित वचनोसे देवीको संतुष्ट कर आप अपने ५०० मुनियों के साथ मरुभूमिकी तरफ विहार किया ।

उपदेशपट्टन (हालमे जिसे ओशीया कहते हैं) की स्थापना-इधर श्रीमालनगरका राजा जयसेन जैनधर्मका पालन करता हुवा अनेक पुन्य कार्य्य कीया पट्टावलि नम्बर ३

प्रस्थान में मंत्रियो उमरावो को खानगीमे यह सूचन करदीथी की मेरे पीछे राजगादी चन्द्रसेन को देना कारण वह. राज के सर्व कार्यों में योग्य है फिर राजातो अरिहंतादि पंचपरमेष्ठि का स्मरण पूर्वक मृत्युलोग और नाशमान शरीर का त्याग कर स्वर्गकी तरफ प्रस्थान कर दीया. यह सुनते ही नगरमे शोक के वादल छा गये. हॉहॉकार मचगया. सबलोगोने मिलके राजाकी मृत्युक्रिया बडाही समारोह के साथ करी बाद राजगादी बैठानेके विषयमे दो मत हो गया एकमत का कहनाथा कि भीमसेन बडा है वास्ते राजका अधिकार भीमसेनको है दूसरा मत था की महाराज जयसेनका अन्तिम कहना है कि राज चन्द्रसेन को देना और चन्द्रसेन राजगुण धैर्य गांभिर्य वीरता-प्राक्रमी और राज तत्र चलानेमे भी निपुण है इन दोनो पार्टियोंके बाद विवाद तर्क वाद यहां तक बढगवाकी जिस्का निर्णयकरना भुजबलपर आपडा पर चन्द्रसेन अपने पक्षकारोको समजादीया की मुझे तो राजकी इच्छा नहीं है आप अपना हटको छोड दीजिये गृह कलेशसे भविष्यमें बडी भारी हानी होगा इत्यादि समझाने पर उनने स्वीकार कर लिया वस । फिर थाही क्या ब्रह्मणों का और शिवोगसकोका पाणि नौ गज चढ गया बडी धामधूमसे भीमसेनका राजाभिषक हो गया. पहला पहल ही भीमसेनने अपनि राज सताका जौर जुलम जैनोपर ही जमाना शरु कीया कभी कभी तो राजसभामेभी चन्द्रसेनके साथ धर्म युद्ध होने लगा । तब चन्द्रसेनने कहा कि महाराज अब आप राजगादीपर न्याय करने को विराजे हैं तो आपका फर्ज है की जैनोको और शिवोको एक ही दृष्टिसे देखे जैसे महाराजा जयसेन परम जैन होने पर भी दोनो धर्म वालोको सामान दृष्टिसे ही दे

नामपर चन्द्रावती नगरी आवाद करी थी चन्द्रसेनने चन्द्रावती नगरी में अनेक मन्दिर बनाया जिसकी प्रतिष्ठा आचार्य स्वयंप्रभसूरि के करकमलोंसे हुई थी अस्तु चन्द्रावती नगरी विक्रमकी बारहवीं तेरहवीं शताब्दी तक ती बड़ी आवाद थी ३६० घरतो क्रोडपति के थे और ३०० जैन मन्दिर थे हमेशा स्वा मीवात्सल्य हुवा करता था आज उसका खण्डहर मात्र रह गया है यह समयकी ही बलीहारी है

इधर भिन्नमाल नगर शिवोपासकों का नगर बन गया वहांका कर्ता हर्ता सब ब्राह्मण ही थे, राजा भीमसेन एक नाम का ही राजा था राजा भीमसेनके दो पुत्र थे एक श्रीपुंज दूसरा उपलदेव पटावली नं. ३ में लिखा है कि भीमसेनका पुत्र श्रीपुंज और श्रीपुंज के पुत्र सुरसुंदर और उपलदेव पर समय का मीलन करनेसे पहली पटावलीका कथन ठीक मीलता हुवा है। महाराज भीमसेनके महामात्य चन्द्रवंशीय सुवड था उसके छोटा भाईका नाम उदड था सुवड के पास अठारा क्रोडका द्रव्य होनेसे पहला प्रकोट में और उदड के पास तीनाणधे लक्षका द्रव्य होनेसे दूसरा कोटमे बसता था एक समय उदड के शरीरमे रात्रिमें तकलीफ होनेसे यह विचार हुवा कि हम दो भाई होने पर भी एक दूसरे के दुःख सुखमें काम नहीं आते है वास्ते एक लक्ष द्रव्य वृद्ध भाईसे ले में क्रोडपति हो पहला प्रकोट में जावसु शुभे उदड अपने भाई के पास जा के एक लक्ष द्रव्य की याचना करी इसपर भाईने एहा की तुमारे विगर प्रकोट शुन्य नही है (दूसरी पटावलि मे लिख है की भाई की ओरत ने पसा कहा) कि तुम करज ले क्रोडपति होनेकी कौशीस करते हो इत्यादि यह अभिमान का वचन उदड को बडा दुःखदाई हुवा एत वहांसे निकल



यहांसे चल दीया रहस्ता में अश्व व्यापारियोंसे ५५ अश्व (दूसरी पट्टावलिमें १८० अश्व लिखा है) ले के ढेलीपुर (दिल्ली) पहुंचे वहा श्री साधु नामका राजा राज करता था वह छैमास राजका काम देखता था और छैमास अन्तेघर महलमे रहता था उत्पलदेव राजकुमार हमेशा राज दरवार मे जाया करता था और एकेक अश्व भेट किया करता था. जब ५५ दिन व १८० दिनमें सब घोड़ें भेटकर चुका तब दूसरे दिन राजा राज सभामें आया और वहा अश्व भेट की बात सुनी तब उपलदेव कुमार को बुलाया पुच्छनेपर कुमरने कहां मे भिन्नमाल के राजा भीमसेन का पुत्र हुं नयानगर बसाने के लिये कुच्छ जमीन की याचना करने के लिये यहां आया हुं इस विषय पट्टावलियों के अलावे कुच्छ प्राचीन कवित भी मीलते हे पर वहा स्यात् पीच्छे से किसी कवियोंने रचा हुवा ज्ञात होता है। खेर राजा श्री साधु कुमर की वीरता पर मुग्ध हो एक घोडी दे दी की जावे जहापर उजड भूमि देखे वहां ही तुम अपना नया नगर बसा लेना पासमें एक शुकनी वेठा था उसने कडा कुमार साब जहां घोडा पैशाव करे वहां ही नगर बसा देना, इसी शुकनी पर राजकुमार और उन्नी वहां से सवार हो चल धरे कि शुबह मंडोर से कुच्छ आगे उजडभूमि पडी थी वहां घोडिने पैशाव कीया वस वहां ही छडी रोप दी नगर बसाना प्रारभ कर दीया उसीली जमीन होनेसे उस नगर का नाम उपणपट्टन रख दीया मंत्रीश्वरने इधर उधर से लोगों को लाके नगरमें बसा रहे थे वहा खबर भीन्नमाल में हुइ वहां से भी उपलदेव उदड के कुटम्ब साथ वहुत से लोग आये ।

“ ततो भीनमालात् अष्टादश सहस्र कुटम्ब

इस विचारसे देवी सूरिजी के पास आई " शासन देव्या
 कथितं भो आचार्य अत्र चतुर्मासकं वरुं तत्र महालाभो भविष्यति"
 हे आचार्य । आप यहां मेरी विनतिसे चतुर्मास करो यहां
 आपको बहुत लाभ होगा इस पर सूरिजी देवि की विनंतिको
 स्वीकार कर मुनियोंसे कह दीया कि जो विकट तपस्या के
 करने वाले हो वह हमारे पास रहे शेष यहां से विहार कर अन्य
 क्षेत्रोंमें चतुर्मास करना इस पर ४६५ मुनि तो गुरु आज्ञासे
 विहार किया " गुरुः पंचत्रिंशत् मुनिभिः सहस्थितः" आचार्यश्री
 ४५ मुनियों के साथ वहां चतुर्मास स्थित रहे । रहे हुवे मुनि-
 योंने विकट यानि उत्कृष्ट चार चार मासकी तपस्या करली ।
 और पहाडी की वनराजी में आसन लगा के सामाधि ध्यान
 रं रमणता करने लग गये । " ज्ञानामृत भोजनम् "

इधर स्वर्ग सदृश उपदृश पकेन में राजा उत्पलदेव राम
 राज कर रहा था अन्य राणियों में जालणदेवी (सग्रामसिंहकी
 पुत्री) पट्टराणिथी उसके एक पुत्री जिस्का नाम शोभाग्यदेवी
 या वह घर योग्य होनेसे राजा को चिन्ता हुई घर की तलास
 कर रहा था एकदा राणिके पास राजाने घात करी तब
 राणिने कहा महाराज मेरी पुत्री मुझे प्राणसे बल्लभ है पसा
 न हो की आप इसको दूर देशमें दे मेरे प्राणों को खो बेठो
 आप पसा घर रहें वाई रात्रिमें सासरे और दिनमें मेरे
 पास की, तलास करावे कि इत्यादि राजा यह सुन और भी
 विचारमें पड गया ।

इधर उहडदे मंत्रि के तिलकसी नाम का पुत्र अच्छा
 लिखा पढा रूपमें भी सुन्दर कामदेव तूल्य था उसे दे

देवितों अदृश हो गई (दूसरी पट्टावलि में यह मुनि सूरिनी का शिष्य था) लोगोंने यह सुन बड़ा दर्ष मनाया और राजा व मंत्री के पास खुशग्वरदी राजाने हुकम दीया कि उस मुनि को लावो, पर मुनि तो अदृश हो गया था तब सब कि सम्मति से सब लोगों के साथ कुमर का हांपांन को ले सूरिजी के पास आये " श्रेष्टि गुरु चरणे शिरं निवेशय एवं कथयति भो दयालु ममदेवरूपा मम गृहीशून्यो भवति तेन कारणेन मम पुत्र भित्तां देहि " राजा और मंत्री गुरुचरणो मे सिर तुका के दीनता के बचनो से कहने लगे । हे दयाल । करूणासागर आज मेरेपर देष रूष्ट हुवा मेरा गृह शुन्य हुवा आप महात्मा हो रेखमें भी मेख मारनेको समर्थ हो वास्ते में आपसे पुत्ररूपी भिक्षा की याचना करता हुं आप अनुग्रह करावे । इसपर उ० वीरधवल ने कहा " प्रासु जल मानीय चरणौ प्रक्षाल्य तस्य छंटितं " फासुकजल से गुरु महाराज के चरणो का प्रक्षाल कर कुमर पर छंट को बस इतना कहने पर देरी ही क्या थी गुरु चरणो का प्रक्षाल कर कुमर पर जल छांटतो ही " सहसात्कारेण सज्जीव भूवः " एकदम कुमर बेठा हुवा इधर उधर देखने लगा तो चोतरफ दर्षका धार्जिन्न बज रदा लोग कहने लगे कि गुरु महाराज को फूपासे कुमरजी आज नये जन्म आवे है सब लोगाने नगरमे जा पोषाको बदल के बटे गाताघाजा के साथ सूरिनी को हजारो लाखो जिह्वाओं से आशीर्वाद देते हुये बडे ही समरोह के साथ नगर मे प्रवेश किया. राजाने अपने खजानाघालो को हुकम दे दिया कि खजाना में बढिया से पढिया रत्नमणि माणक लीलम पत्ता पीरोजिया लशणियादि बहुमूल्य जवेरायत दो घट महात्माजी के चरणो में भेट करो ? तदानुस्वार रत्नादि भेट किये तथा ऊदड छेष्टिने भी बहुत द्रव्य भेट किया ।

देवितों अदृश हो गई (दूसरी पट्टाधलि में वह मुनि सूरिनी का शिष्य था) लोगोंने यह सुन बड़ा दर्ष मनाया और राजा व मंत्री के पास खुशखबरदी राजाने हुकम दीया कि उस मुनि को लावो, पर मुनि तो अदृश हो गया था तब सब कि सम्मति से सब लोगों के साथ कुमर का झांपान को ले सूरि-जो के पास आये " श्रेष्टि गुरु चरणे शिरं निवेश्य एवं कथ-यति भो दयालु ममदेवरूष्टामम गृहीशून्यो भवति तेन कारणेन-मम पुत्र भिक्षां देहि " राजा और मंत्री गुरुचरणों मे स्तिर झुका के दोनता के बचनो से कहने लगे । हे दयाल । करुणासागर आज मेरेपर देश रूष्ट हुवा मेरा गृह शुन्य हुवा आप महात्मा हो रेखमें भी मेख मारनेको समर्थ हो वास्ते में आपसे पुत्ररूपी भिक्षा की याचना करता हुं आप अनुग्रह करावे । इसपर उ० वीरधवल ने कहा " प्रासु जल मानीय चरणौपक्षाल्य तस्य छंटितं " फासुकजल से गुरु महाराज के चरणों का प्रक्षाल कर कुमर पर छट की घस इतना कहने पर देरी ही क्या थी गुरु चरणों का प्रक्षाल कर कुमर पर जल छांटतो ही " सहसात्कारेण स-ज्जीव भूवः " एकदम कुमर घेठा हुवा इधर उधर देखने लगा तो चोतरफ दर्षका धार्जिष बज रहा लोग कहने लगे कि गुरु महाराज की कृपासे कुमरजी आज नये जन्म आये है सब लोगाने नगरमे जा पोषाकी बदल के बडे गाजाबाजा के साथ सूरिनी को हजारो लाखों जिह्वाओं से आशीर्वाद देते हुये बडे ही समरोह के साथ नगर मे प्रवेश किया. राजाने अपने खजानाघालो को हुकम दे दिया कि खजाना में पडिया से पडिया रत्नमणि मानव-लीलम पत्ता पीरोजिया लशणिषादि बहुमूल्य जवेरायत हो यह महात्माजी के चरणों में भेट करो ! तदानुस्वार रत्नादि भेट किये तथा ऊदड धेदिने भी बहुत द्रव्य भेट किया।

“गुरुणा कथितं मम न कार्ये” आचार्यश्रीने फरमाया कि मेने तो खुद ही वैताञ्जगिरि का राज और राज खजाना त्याग के योग लिया है अब हम त्यागियोंको इस द्रव्यमे क्या प्रयोजन है यह तो गृहस्थ लोगोंका भूषण है अगर इसे देशहित धर्महित में लगाया जाय तो पुण्योपाजित हो सकता है नहींतो दुर्गतिका ही कारण है इत्यादि । अगर हमें सुश करना चाहते हो तो “भवद्भिः जिनधर्मो गृह्यतां” आप सब लोग पवित्र जैनधर्मको स्वीकार करो जिससे तुमारा कल्याण हो इत्यादि ।

यह सुन श्रेष्ठ वैगरह राजाके पास जाके सब हाल सुनाया आचार्यश्री की निःस्पृहीताने राजाके अन्तकरणपर इतना अमर डाला कि यह चतुरांग जैन्या और नागर्गिक जनोंको साथ ले सृजिजीको वन्दन करनेको बड़े ही आडम्पर से आया आचार्यश्रीको वन्दन कर बोलाकि हे भगवान् ! आपतो हमारे जैसे पामर जीयों पर बड़ा भारी उपकार किया है जिसका बदला इस भयमे तो क्या परभयोभयमे देने को हम लोग असमर्थ है हमारी इच्छा आपश्री के मुग्धादिन्दसे धर्म भवण करने की है ।

आचार्यश्रीने उद्यम्यर और मधुरभाषामे धर्मदेशना देना प्रारंभ किया हे गजेंद्र ! इस आरापार संसारके अन्दर जीव परिश्रमण करते हुये का अनन्तकाल हो गया कारण कि सुश्रमवाटर तिगोदमे अनन्तकाल पृथ्वीपाणि नेत्रायुमे अमन्याताकाल परंपकेन्द्रियमे अनन्तानन्तकाल परिश्रमण कीया याद कुछ पुन्य बढ जानेमे त्रेन्द्रिय पर्यं तेन्द्रिय चारिन्द्रिय य त्रिच पांचिन्द्रिय अनायं मनुष्य या अकाम पुण्योदय देय

योनिमें भ्रमन किया पर उत्तम सामग्री के अभाव शुद्ध धर्म न मीला, हे राजन् ! सुकृतकर्मका सुकृत फल और दुःकृत कर्मका दुःकृतफल भविष्यमें अवश्य मीलता है सबसे पहला तो जीवोको मनुष्यभव मीलना मुश्किल है कदाचू मनुष्य भव मील गया तो आर्यक्षेत्र उत्तम कुल शरीरनिरोग इन्द्रियोपुर्ण और दोषायुष्य कमशः मीलना दुर्लभ है कदाच यद्यत्तु सबसे सामग्री मील जावे तो सद्गुरुओंकी सेवा मिलना कठिन है यह आप जानते हो कि गुरु विगर्ह ज्ञान हो नहीं सकता है जगत् में ऐसे भी गुरु नाम धरानेवाले पाये जाते हैं की वह भांगों पीना, गाजा चडश उढाना, व्यभिचार करना, यज्ञहोम के नाम हजारी लाखों पशुओंके प्राण लुटना मांस मदिरा भक्षण करना इत्यादि अत्याचार करने वालोसे सद्गुणोंकी प्राप्ति कभी नहीं होती है वास्ते आत्मकल्याणके लिये सबसे पहला सद्गुरु की आवश्यकता है सद्गुरु मिलने पर भी सदागम श्रवण करणा दुर्लभ है विगर्ह सुने दितादित की खबर नहीं पड सकती है अगर सुन भी लीया तो सत्य घातको स्वीकार करना बडा ही मुश्किल है स्वीकार करने पर भी उस पर पान्शो रख उसमें पुरुषार्थ करना सबसे कठिन है ।

हे धराधिप । इस पृथ्वीपर कई धर्म प्रचलित हैं सबसे प्राचीन और सर्वोत्तम है तो एक जैन धर्म है जैन धर्म का तत्त्व-ज्ञान इतना उच्च कोटि का है की माधारण मनुष्य उसमें एकदम प्रवेश होना असंभव है जैन धर्म का आचार व्यवहार भी सबसे उच्चे दर्जा का है अहिंसा परमो धर्मः जैन धर्म का मुख्य सिद्धान्त है यद्यत्तु धर्म सपूर्ण ज्ञानवाले सर्वज्ञ का फरमावा हुया है मांस मदिरा स्वीकार परस्त्रीगमन वैश्यागमन चीं

है (३) तीसरा व्रतमे पूर्वोक्त स्थूल चौरी करना मना है (४) चतुर्थ व्रत में परस्त्रि वैश्यादि से गमन करना मना है (५) पंचवा व्रत में धनमाल राज स्टेट वगेरह का नियम करने पर अधिक बढ़ाना मना है (६) छठा व्रत में चोतरफ दिशाओं में जितनी भूमिका में जानेका प्रमाण कर लिया हो उससे अधिक जाना मना है (७) सातवा व्रत में पहला तो भक्षाभक्षका विचार है मांस मंदिर वासीविद्वल सहैत मक्खनादि जो कि जिस्मे प्रचूर जीवों की उत्पत्ति हो वह खाना मना है दूसरा व्यापरा पेक्षा है जिस्मे ज्यादा पाप और कम लाभ और तुच्छव्यापर हो पसे व्यापार रूपी कर्मादान करनामना है (८) अनर्था दंडव्रत है जोकी अपना स्वार्थ न होनेपर भी पापकारी उपदेशका देना दूसरों की उत्पत्ति देख इर्षा करना आवश्यकतासे अधिक हिंसा कारी उपकरण एकत्र करना प्रमाद के बस ही घृत तेल दुग्ध दही छास पाणि के चरनन खुले रख देना इत्यादि (९) नौवा व्रतमे हमेशों समताभाव सामायिक करना (१०) दशवा व्रतमे दिशादि मे रहे हुये ब्रव्यादि पदार्थों के लिये १४ नियम याद करना (११) ग्यारवा व्रतमे आत्मावी पुटिरूप पौषध करना (१२) बारहवा व्रत अतित्थी महात्माओषो सुपात्रदान देना इन गृहस्थधर्म पालने वालोंको हमेशों परमात्मा की पूजा परना नये नये तीर्थों की यात्रा करना रथाधर्मि भाइयों से साथ वात्सल्यता और प्रभापना करना नौबहवा से लिये दने वहां तक अभयिय पहटा पीराना, जैतमन्दिर जैतगुवि हान साधु साधिविषो भावप ध्यायिषाओ पर्य सात देशमें समये होनेपर दाय की चरचना और जितसावनीमति से तत्पत धन लगा देना गृहस्थोंका आचान है भागे पद से मुक्तिपद की इत्या-
 चाते सर्व प्रकारसे तीर्थहिंसादा त्याग पर इत पीरना ही

है (३) तीसरा व्रतमे पूर्वोक्त स्थूल चोरी करना मना है (४) चतुर्थ व्रत में परस्त्रि वैश्यादि से गमन करना मना है (५) पंचवा व्रत में धनमाल राज स्टेट वगेरह का नियम करने पर अधिक बढ़ाना मना है (६) छठा व्रत में चोतरफ दिशाओं में जितनी भूमिका में जानेका प्रमाण कर लिया हो उससे अधिक जाना मना है (७) सातवा व्रत में पहला तो भक्षाभक्षका विचार है मांस मदिर वासीविद्वल सहेत मक्खनादि जो कि जिस्मे प्रचूर जीवों की उत्पत्ति हो वह खाना मना है दूसरा व्यापरा-पेक्षा है जिस्मे ज्यादा पाप और कम लाभ और तुच्छव्यापर हो एसे व्यापार रूपी कर्मादान करनामना है (८) अनर्था दंडव्रत है जोकी अपना स्वार्थ न होनेपर भी पापकारी उप-देशका देना दूसरों की उन्नति देख इर्षा करना आवश्यकतासे अधिक हिंसा कारी उपकरण एकत्र करना प्रमाद के वस ही घृत तेल दुग्ध दही छास पाणि के चरतन खुले रख देना इत्यादि (९) नौवा व्रतमे हमेशों समताभाव सामायिक करना (१०) दशवा व्रतमे दिशादि मे रहे हुवे द्रव्यादि पदार्थों के लिये १४ नियम याद करना (११) ग्यारवा व्रतमे आत्माकी पुष्टिरूप पौषध करना (१२) बारहवा व्रत अतित्थी महात्माओको सुपात्रदान देना इन गृहस्थधर्म पालने वालोको हमेशों परमात्मा की पूजा करना नये नये तीर्थों की यात्रा करना स्वाधर्मि भाइयों के साथ वात्सल्यता और प्रभाषना करना क्षीघ्रदया के लिये घने वहां तक अमरिय पदटा फीराना. जैनमन्दिर जैनमूर्ति ज्ञान माधु-साधियों भाषक भाषिकाओं एव सात क्षेत्रमे नमः द्रोनेपर द्रव्य को खरचना और जिनशासनोन्नति मे नमः द्रव्य दान देना गृहस्थोंका आचार है आगे बड के मुनिव्रत की इच्छा-वाले सर्व प्रकारसे जीवहिंसावा त्याग पद इट दीटना चोरी

हे प्रभो । इसका कारण यह था कि हम लोगों को पहलासे ही ऐसा शिक्षण दिया जाता था की जैन नास्तिक है ईश्वर को नहीं मानते हैं शास्त्रविधिसे यज्ञ करना भी यह निषेध करते हैं नम्र देव को पूजते है अहिंसा २ कर जनताका शौर्य पर कुठार चलाते है इत्यादि पर आज हमारा शोभाग्य है कि आप जैसे परमोपकारी महात्माओंके मुखार्थिन्दसे अमृतमय देशना श्रवण करनेका समय मीला, हे दयाल । आज हमारा सब भ्रम दूर हो गया है नतो जैन नास्तिक है न जैनधर्म जनताको निर्बल कायर बनाता है निस्मे ईश्वरत्व है उसे जैनधर्म ईश्वर (देव) मानते है जैनधर्म एक पवित्र उच्च कोटीका स्वतंत्र धर्म है हे विभो । इतने दिन हम लोग मिथ्यात्व हपी नशेमें ऐसे वैभान हो मिथ्या फौसीमें फस कर सरासर व्यभिचार अधर्मका धर्म समझ रखाथा सत्य है कि विना परीक्षा पीतलकोभी मनुष्य सोना मान धोखा खालेता है यह युक्ति हमारे लिये ठीक चरतार्थ होती है हे भगवन् । हम तो आपके पहलेसेही ऋणि है आप श्रीमानोंने एक हमारे जमा-हकोही जीवतदान नहीं दिया पर हम सबको एक भवके लियेही नहीं किन्तु भवोभवके लिये जीवन दिया है नरकके रहस्ते जाते हुये हमको स्वर्ग मोक्षका रहस्ता बतला दिया है इत्यादि सुरिजी के गुण कीर्तन कर रानाने फटा की हम सब लोग जैनधर्म स्वोकार करने को तैयार है आचार्यश्रीने कहा " जहांसुखम् " इस सुअवसर पर एक नया चमत्कार यह हुआ की आकाशमें सनघन अघाप्तो और साणकार होना प्रारंभ हुआ सब लोग उर्ध्व दृष्टि का देखने लगे इतनेमें तो वैमानोसे उतरते हुये सैकड़ों विद्याधर नरनारियो सात्कृत शरीर सुरिजी के चरण कमलोंमें घन्दना करने लगे इतनासे





राजा ॥ प्रमानेन सत्यानीत कुटुंबियोकं माय मरिचिके वामश्रेमे जैन यम अशोकार क्रीया, योग मज्जन
 यत्कि म्यापना हरे, तदनीय आप हण देव विद्याश्रेमे पुन कुट्ट की। (पृ. २६)



1 और प्रगल्भे सग्यानीत कुटुंबियाँके साथ सरिंके ताम मंमे जेन मं
 रन्कि स्याकना हुई, वडनार्य आण हणु देव चिप म्गेन म्म म्म म्म

राजा उपलदेवादि सब को उत्साहावृद्धक धन्यवाद दीया कि आप लोगोंका प्रचल पुन्योदय है कि ऐसे गुरु मडाराज मीले है आपको कोटीशः धन्यवाद है कि मिथ्या फांसी से छुट पवित्र धर्म को स्वीकार कीया है आगे के लिये आप ज्ञान श्रद्धा पूर्वक इस धर्म का पालनकर अपनि आत्मा का कल्याण करते रहना राजा उपलदेव उन विद्याधरों का परमोपकार माना और स्वाधर्मि भाइ सभज महमान रहने की विनति करी इसपर वह आपसमे घातसल्यता करते हुवे वाद देवियों और विद्याधर सूरिजी को वन्दन नमस्कार कर विसर्जन हुवे ।

अब तो उपवेशपुर के घर घरमें जैन धर्म की तारीफ होने लगी और रहे हुवे लोग भी जैन धर्म को स्वीकार करने लगे यह घात घाममार्गिमत्त के अध्यक्षो के मट्टों तक पहुंच गई की एक जैन सेवडा आया है वह न जाने राजा रज्यापर क्या जादु डारा कि यह सबको जैन बना दीया अगर उस पर कुछ प्रयत्न न किया जायेगा तो अपनि तो सब की सब दुकानदारी उठ जायेगा । यह तो उनको विश्वास था कि राजा प्रज्या को जैसे पाठ पढावेगें वैसे ही मानने लग जायेंगे सेवडाने उसे जैन बनाया तो पलो अपुन फीरसे शय बना देंगे पना सोच यह सब जमान थी जमान सज धज के राज सभामे आये पर जैसे किसीका सर्प घेय लुट लेनेसे उन पर दुर्भाग होता है वैसे उन पासणिलीये पर राजा प्रजा का दुर्भाग हो गया था. राजाने न तो उनको आदर सम्कार दीया न उने मोलाया इसपर यह लोग कहने लगे कि 'रे राजन' हम जानते हैं कि आप अपने पूर्वजो से क्या जाया पदिन धर्म को तोड़ अर्थात् पूर्वजो की परम्परा पर तडीर कर

१० लोगो में आज आमतौर से जाहिर करताहूं कि जैन धर्म
 एक आधुनिक धर्म है पुनः वह नास्तिक धर्म है पुनः वह
 ईश्वर को नहीं मानते हैं इनके मन्दिरों में नग्न देव है इत्यादि
 [मगर सूरिजी के पास बैठे हुए श्री वीरधवल्लोपाध्याय ने गभिर
 मन्दा में घट्टि योग्यता से बोला कि जैन धर्म आधुनिक नहीं
 परन्तु प्राचीन धर्म है जिस जैन धर्म के विषय में वेद साक्षि दे
 रहे हैं अथवा त्रिण्यु और महादेवने जैन धर्म को नमस्कार
 दिया है पुराणोवालोने भी जैन धर्म को परम पवित्र माना
 है (देखा पहला प्रकरण में जैन धर्म की प्राचीनता) और
 जैन धर्म नास्तिक भी नहीं है कारण जैन धर्म जीवान्निष पुन्य
 पाप आश्रय नगर निज्जरा पण्य और मोक्ष तथा लोकअलोक

मिथ्यःत्व मार्ग लुप्त होता गया. राजा उपलदेव आदि सूरिनी कि हमेशो सेवा भक्ति करते हुवे व्याख्यान सुन रहे थे सूरिजीने तखमिमंसा तखसार मत्त परिक्षादि केइ ग्रन्थ भी निर्माण किये थे एक समय राजाने पुच्छा कि भगवान् यहां पाखण्डियोंका चिरकालसे परिचय है स्यात् आपके पधार जानेके बाद फिरभी इनका दाध न लग जावे वास्ते आप पसा प्रबन्ध करावे की साधारण जनताकि श्रद्धा जैनधर्मपर मजबुत हो जावे ? सूरिजीने फरमाया कि इस के लिये दो रहस्ता है (१) जैन-तखोंका ज्ञान होना (२) जैन मन्दिरोका निर्माण होना । राजाने दोनों बातों को स्वीकार कर एक तरफ तो ज्ञानाभ्यास बढाना सुरू कीया दूसरी तरफ लुणाघ्री पहाडी के पास की पहाडी पर एक मन्दिर बनाना प्रारभ करदीया । उसी नगरमें ऊढढ मंत्री पहले से ही एक नारायणका मन्दिर बना रहा था पर वह दिनकों बनाये और रात्रिमें पुनः गिरजावे इससे तंगहो सूरिजीसे इसका कारण पुच्छा तों सूरिजीने कहा कि अगर यह मन्दिर भगवान महाधीर के नाम से बनाया जाय, तो इसमें कोई भी देय उपद्रय नहीं करेगा—चतुर्मास के दिन ननदीक आ रहे थे राजाके मन्दिर तैयार होनेमें बहुत दिन लगनेका संभव था वास्ते मंत्री का मन्दिर को शीघ्रतासे तय्यार करवाया जाय कि यह प्रतिष्ठा सूरिजी के करकमलोसे हो इसवास्ते विशाल संख्यामें मजुर लगाये महाधीर प्रभुका मन्दिर इतना शीघ्रतासे तय्यार करवायाकि यह रक्षतपयात्ममें ही तैयार होने लगा कारण कि बहुतसा काम तों पहले से ही तय्यार था. इधर समयने अज्ञ करी कि भगवान मन्दिर तो तय्यार होनेमें है पर इसमें विराजमान होने योग्य मूर्तिही जरूरत है ? सूरिजीने कहा धैर्यता रखी मूर्ति तय्यार हो रही है । इधर दवा हो रहा

वान के दर्शनोका पिपासु हो रहा है इत्यादि ? सूरिजीने सोचा की बिब तय्यार होनेमें अभी सातदिनकी देरी है परन्तु दर्शनके लिए आतुर हुआ संघके उत्साहको रोकना भी तो उचित नहीं है, भवितव्यता पर विचार कर सूरिजी अपने शिष्य समुदायके साथ संघमें सामिल हो जहां भगवानकी मूर्ति थी वहां जा कर जमीनसे बिब निकलवा कर नमस्कार पूर्वक हस्तीपराखूठ करवा के धामधूम पूर्वक भगवान्का नगर प्रवेश करवाया सबसे बड़ाही आनंद मंगल और घरघर उत्सव धामणा हुआ कारण पहला उन लोगोंने दिसक और विकारी देवि देवतों की मूर्तियोंको देखी थी पर आज भगवान् की शान्त मुद्रा निर्विकार किसी प्रकारकी चेष्टा रहित पद्मासन मूर्ति देख लोगोंकी जैनधर्मपर और भी बृह श्रद्धा होगई । ऊहढ-मंत्रोका बनाया हुआ महावीर मन्दिरके एक विभागमें भगवान् को विराजमान किया. यहांपर एक विशेष बात यह हुई कि देविने मूर्तिको सर्वांग सुन्दर बनाना प्रारंभ कियाथा अगर सात दिन और देर कि गई होती तो देविकी मनसा मुता-चोक कार्य हो जाता पर आतुरता करनेसे भगवान् के हृदय पर निवृफल जीतनी गांठी (स्तनाकार) रह गई इससे देवि नाराज हुई पर सूरिजी साथमें थे वास्ते उसका कोई जोर न चला “ भवितव्यता चलवान् है ”

इधर आश्विन मासकि नौरात्री नजदीक आने लगी तब संघाग्रेसर लोगोंने सूरिजी से अर्ज करी कि हे प्रभो ! आप तो हमे कहते हो कि अगरह अपराध किसी जीवोंको तकलीफ नहीं देना पर हमारे यहां चमुडादेवि पती निर्दय है कि इस नौरात्रीमें प्रत्येक घरसे एकैक भैला और प्रत्येक मनुष्यमें

7

8

9

10

11

वान के दर्शनोका पिपासु हो रहा है इत्यादि ? सूरिजीने सोचा की बिष तय्यार होनेमें अभी सातदिनकी देरी है परन्तु दर्शनके लिए आतुर हुषा संघके उत्साहको रोकना भी तो उचित नहीं है, भवितव्यता पर विचार कर सूरिजी अपने शिष्य समुदायके साथ संघमें सामिल हो जहां भगवानकी मूर्ति थी वहां जा कर जमीनसे बिष निकलवा कर नमस्कार पूर्वक हस्तीपरारूढ करवा के धामधूम पूर्वक भगवान्का नगर प्रवेश करवाया सघमें बडाही आनंद मंगल और घरघर उत्सव यथा-मणा हुषा कारण पहला उन लौंगोंने हिसक और विकारी देखि देषतों की मूर्तियोको देखी थी पर आज भगवान् की शान्त मुद्रा निर्विकार किसी प्रकारकी चेष्टा रहित पद्मासन मूर्ति देख लोगोंकी जैनधर्मपर और भी बूढ भ्रद्धा होगई । ऊहढ-मंत्रीका बनाया हुषा महावीर मन्दिरके एक विभागमें भगवान् को विराजमान किया. यहांपर एक विशेष बात यह हुई कि देखिने मूर्तिको सर्वांग सुन्दर बनाना प्रारंभ कियाथा अगर सात दिन और देर कि गइ होती तो देखिकी मनसा मुता-बीक कार्य्य हो जात। पर आनुरता करनेसे भगवान् के हृदय पर निबुफल जीतनी गांठो (स्तनाकार) रह गइ इससे देखि नाराज हुई पर सूरिजी साथमें ये वास्ते उसका कोई जोर न चला “ भवितव्यता बलवान् है ”

इधर आश्विन मासकि नौरात्रो नजदीक आने लगी तब संघाप्रेसर लौंगोंने सूरिजी से अर्ज करी कि हे प्रभो ! आप तो हमे कहते हो कि बगरह अपराध किसी जीवोंको तकलीफ नहीं देना पर हमारे यहां चमुडादेवि पत्नी निर्दय है कि इस नौरात्रोमें प्रत्येक घरसे पकेक भैसा और प्रत्येक मनुष्यसे



अर्जुन करी थी कि आप राता प्रज्या को जैनी तो बनाते हो पर मेरे कडडका मरडका मत छाडाना ? पर आपने तो ठोक दी क्या इत्यादि देवि का बचना सुन सूरिजी महाराजने कहा देवि यह नलयेर तो तेरा कडडका है और गुलराध तेरा मरडका है इस को स्वीकार क्यों नहीं करती हा भो देवि पूर्व जन्म में तो तुमने अच्छा सुकृत कीया बहुत जीवों को जीतव दान दीया तब तुमे देव योनि मीली है पर यहां पर यह घोर हिंसा करवा के तुम किस योनि में जाना चाहाती हो हे देवि अच्छा मनुष्य भी कुतूहल के लिये निरर्थक हिंसा करना नहीं चाहाता है तो तुम ज्ञानवान् देवि होके फक्त कुतूहल के मारी हजारो जीवो के प्राणो पर छुरा चलवाना क्यों पसंद कीया है इत्यादि उपदेश देने पर देवि उस बखन तो शान्त हो गई पर गृहस्थ वर्ग घबरा रहे थे सूरिजीने उन पर वासक्षेप कर विसर्जन कीये पर देवि सर्वता शान्त नहीं हुई थी. अज्ञान के घस हो यह रहा देख रही थी कि कभी आचार्यभी प्रमाद मे हो तो मैं मेरा बदला लु ।

“ एकदा छलं लब्ध्या देव्या आचार्यस्य कालवेलायां किंचित् स्वध्यायादि रहितस्य वामनैत्रे भूराधिष्ठिता वेदना जातः ”

आचार्यश्री सदैव अप्रमत्तपने ही रहते थे पर एकश अकाल में स्वध्याय ध्यान रहित होने से देविने आपश्री के वामा नैत्र में वेदना कर दी वह भी एसी कि कायर मनुष्य उसे सहन भी नहीं कर सके पर सूरिजी को तो उस की परवा ही नहीं थी उन्होने तो अपने दुष्ट कर्मों का देना चुकाने को दुकान ही खोल रखी थी तत्पश्चात् देवि अपना असली रूप कर आच श्री के पास आ के कहने लगी कि भो आचार्य मैं

10
11
12
13
14
15
16
17
18
19
20
21
22
23
24
25
26
27
28
29
30
31
32
33
34
35
36
37
38
39
40
41
42
43
44
45
46
47
48
49
50
51
52
53
54
55
56
57
58
59
60
61
62
63
64
65
66
67
68
69
70
71
72
73
74
75
76
77
78
79
80
81
82
83
84
85
86
87
88
89
90
91
92
93
94
95
96
97
98
99
100

सम्यक्त्व धारिणि हुई मांस तो क्या पर देवीने पत्नी प्रतिष्ठा कर कष्ट दीया कि आज से मेरे रक्त वर्ण का पुष्प तक भी नहीं छुटेगा. और मेरे भक्त नो उपदेशपुर में महावीर के विघ्न की पूजा करते रहेगें आचार्य रत्नप्रभसूरि और इन की संतान की सेवा उपासन करते रहेगें उन के दुःख संकट को मैं निवारण करूंगी और विशेष काम पडने पर मुझे जो आराधन करेगा तो मैं कुमारी कन्या के शरीर मे अवतीर्ण हो आउंगी इत्यादि देवी के बचन सुन और भी “ श्री सच्चिका देव्या वचनात् क्रमेण श्रुत्व प्रचुग जनाः श्रावकत्वं प्रतिपन्नाः ” बहुत से लोग जैन धर्म को स्वीकार भावक बन गये और जैन धर्म का बडा भारी उद्योत हुवा.

उपदेश पट्टन में भगवान् महावीर प्रभु का सिखर बद्ध मंदिर तय्यार हो गया तत्पश्चात् प्रतिष्ठा का मुहूर्त मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमि गुरुवार को निश्चित हुवा सब सामग्री तैयार हो रहीथी इधर रत्नप्रभसूरि की आज्ञा से ४६५ मुनि विहार किया था उन से कनकप्रभादि कितनेक मुनि कोरंटपुर (कोह्ला पट्टन) में चतुर्मास किया था आपन्नी के उपदेश से वहां के श्रावक वर्गने भगवान् महावीर का नवीन मन्दिर बनवाया निस्के प्रतिष्ठा का मुहूर्त भी मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमि का था तब कोरंट सघ एकत्र हो आचार्य रत्नप्रभसूरि को आमन्त्रण करने को आये “ तेनावसरे कोरंटकस्य श्राद्धानां आह्वानं आगतं ” अर्ज करने पर सूरिनीने कहा कि इस टेम पर यहां भी प्रतिष्ठा है वास्ते तुम वहां पर रहे कनकप्रभादि मुनियों से प्रतिष्ठा करा लेना. इसपर

सप्तत्या (७०) घत्सराणं चरम जिनपतेमुक्त जातस्य षण्णं.
पंचम्यां शुक्ल पक्षे सुर गुरु दिवसे द्राघण सन्मुहूर्ते ।

रत्नाचार्यैः सकल गुणयुक्तैः सर्व संघानुज्ञातैः

श्रीमह्वीरस्य विधे भव शत मथने निर्मितेयं प्रतिष्ठाः ।१।

उपकेशे च कोरंटे तूल्यं श्रीवीरविद्ययोः

प्रतिष्ठा निर्मिता शक्त्या श्रोरत्नप्रभसूरिभिः ।१।

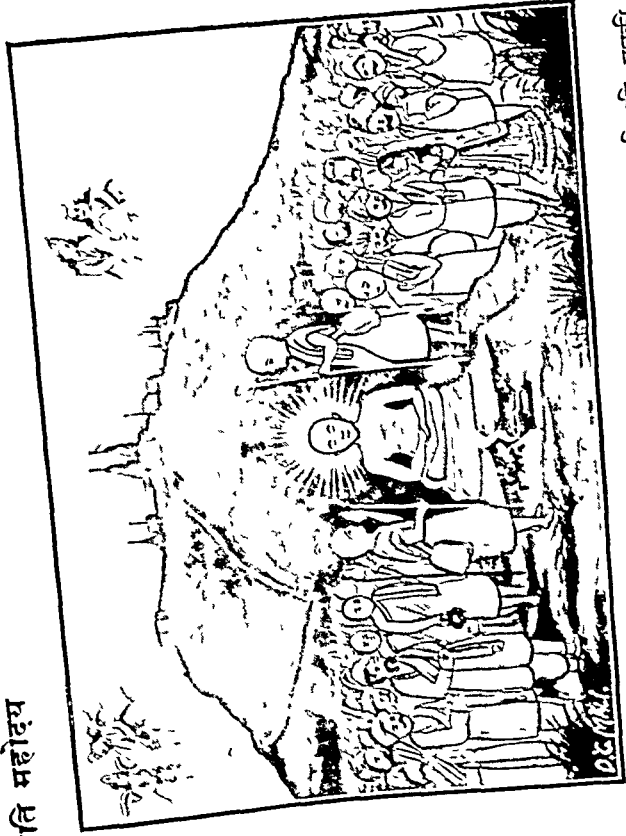
कोरट गच्छ में भी बड़े बड़े विद्वानाचार्य हो गये थे जिनके कर कमलो से कराइ हुइ दजारो प्रतिष्ठा का लेख मीलते हैं वर्तमान शिलालेखों में भी कोरंट गच्छाचार्यों के बहुत शिलालेख इस समय मौजूद हैं वह मुद्रित भी हो चुके हैं समय की बलिहारी हैं जिस गच्छ में दजारो की मरुया में मुनिगण भूमिपर विहार करते थे वहां आज एक भी नहीं वि. सं. १९१४ तक कोरट गच्छ के श्री अनीतसिद्धसूरि नाम के श्री पूज्य थे वह वीकानर भी आये थे लंगोट के बड़े ही सचे और भारी चमत्कारी थे अब तो सिर्फ कोरंट गच्छीय महात्माओं कि पोसालों रह गई हैं और वह कोरंट गच्छ के श्रावकों की घंसावलियों लिखते हैं तद्यपि जैन समाज कोरंट कि आभारी हैं और उस गच्छ का नाम आज भी अमर है ।।।

आचार्य रत्नप्रभसूरि उपकेश पटन में भगवान् महावीर प्रभु के मंदीर की प्रतिष्ठा करने के बाद कुच्छ रोज वहां पर धिराजमान रहै धावक वर्ग को पूजा प्रभाषना स्वामिवात्सल्य सामायिक प्रतिक्रमण व्रत प्रत्याख्यानादि सब क्रिया प्रवृत्तियों का अभ्यास करवा दीया था

आचार्यरत्नप्रभसूरिने यह सुना था कि मेरे वैक्य रूप

होगा वास्ते जातिधर्म बना देना बहुत लाभकारी होगा इस वास्ते सब साधुओं को कम्मर कस के अन्य लोगों को प्रति-बोध दे दे कर इस जातियों की वृद्धि करना बहुत जरूरी बात है इत्यादि घातलाप के बाद वनकप्रभसूरि की तो उप-केशपट्टन की तरफ विहार करने कि आज्ञा दी वनकप्रभ-सूरिने उपकेशपट्टन पधार के उपलदेवराजा के बनाये हुवे पार्श्वनाथ मन्दिर की प्रतिष्ठा करवाइ इत्यादि अनेक शुभ कार्य आपके उपदेश से हुवे और सूरिजीने आप उसी प्रान्त मे व अन्य प्रान्तो मे विहार करने का निर्णय किया। रत्नप्रभ सूरिने फिर अपने १४ वर्ष के ज्ञावन मे हजारो लाखो नये जैन बनाये जिस्मे पोरवाडो से संबन्ध रखनेवालों को पोर-वाडो मे मीला दिया श्रीमालो से सम्बन्ध रखनेवालो को श्री-मालो मे और उपकेश वंश से तालुक रखनेवालों को उपकेश वंश मे मीलाने गये उपकेशपुर के गौत्रो के सिवाय (१) चरड गोत्र (२) सुघड गोत्र (३) लुग गोत्र (४) गटिया गौत्र एवं चार गौत्रोंकी और स्थापना करी आपधीने अपने करकम-लोसे हजारो जैन मूर्तियोंकी प्रतिष्ठा और २१ धार भीसिद्धगिरि का संघ तथा अन्यओ शासनसेवा और धर्म का उपोत्त किया आपधीने करीबन् १० लक्ष नये जैन बनाये थे. पट्टावलिमें लिखा है कि देविने महाशिवद्व द्वेक्षेत्रमें श्री सीमंधर स्थामिसे निर्णय किया था कि रत्नप्रभसूरिका नाम पौरासी चौबीसी मे रहेगा एक भवकर मोक्ष जायेगा इत्यादि ..जन कोम आचार्यओ के उपकारकी पूर्ण ऋणि है आपओके नाम मात्रसे दुनियोंका भला होता है पर खेद हम घात का है कि कीतनेक पृथग्गी पसे अज्ञ ओसवाल है कि कुमति के कदागृहमें पढवे पसे महान् उपकारी गुरुवर्य के नामतक को भुठ बैठे है।

जेन जाति महोदय



म अयस्या जान, तरण तारण मिद्धक्षेत्रकी तलेटीमें असंख्य मुनि व श्रावक श्राविकादि सबकी उपस्थितिमें
श्री रत्नप्रभसुरीश्वरने समाधिपूर्वक स्वर्गको प्रस्थान कीया.

सूरि सलेखना करते हुवे पवित्रतीर्थ सिद्धाचल पर पधार गये वहां एक मासका अनसन कर समाधि पूर्वक नमस्कार महामंत्र का ध्यान करते हुवे नाशमान शरीर का त्यागकर आप वारहवे स्वर्गमें जाके विराजमान होगये जिन समय आचार्य श्री सिद्धाचलपर अनसन कीया था उसरोजसे अन्तिम तक करीबन ५००००० श्रावक श्राविका सिवाय विद्याधर और अनेक देवि देवता वहां उपस्थित थे आपश्रीका अग्निसंस्कार होने के बाद अस्थि और रक्षा भस्मी मनुष्योंने पवित्र समझ आपश्रीकी स्मृतिके लिये ले गयेथे आपके संस्कार के स्थानपर एक बड़ा भारी विशाल स्थुभभी श्री संघने कराया था जिस्मे लाखों द्रव्य संघने खरच कीयाथा पर कालके प्रभावसे इस समय वह स्थुभ नहीं है तो भी आपश्रीकी स्मृतिके चिन्ह आजभी वहां मौजूद है विमलवसीमे आपश्री के चरण पादुका अभी भी है इस रत्नप्रभसूरि रूप रत्न खोदनेसे उस समय संघका महान् दुःख हुआथा भविष्यका आधार आचार्य यक्षदेवसूरि पर रख पवित्र गिरिराजकी यात्रा कर सब लोग वहांसे विदाहो आचार्य श्री यक्षदेवसूरिके साथ में यात्रा करते हुवे अपने अपने नगर गये और आचार्य यक्षदेवसूरि अपने पूर्वजोके बनाये हुवे जैन जातिशा उप देशरूपी अमृतधारा से पोषण करते हुवे फीरभी नये जैन बनाते हुवे उसमे वृद्धि करने लगे ॐ शान्ति यह भगवान् पार्श्वनाथका छठा पाठ आचार्य रत्नप्रभसूरि अपनी चौरासी वर्षकी आयुष्य पूर्ण कर घोरान् चौरासी वर्षे निर्वाण हुवे यह महा प्रभाविक आचार्य हुवे इति ।

२७ ,, यक्षदेवसूरि	३२ ,, यक्षदेवसूरि.
२८ ,, कणसूरि:	३३ ,, कणसूरि:
२९ ,, देवगुप्तसूरि:	३४ ,, देवगुप्तसूरि:
३० ,, सिद्धसूरि:	३५ ,, सिद्धसूरि:*
३१ ,, रत्नप्रभसूरि:	३६ ,, कणसूरि:

* इन आचार्यके बाद श्रीरत्नप्रभसूरि: और यक्षदेवसूरि इन दोनों नामोंको भण्डार कर शेष तीन नामसेही परम्परा चली है ।

३७ ,, देवगुप्तसूरि:	५१ ,, कणसूरि:
३८ ,, सिद्धसूरि:	५२ ,, देवगुप्तसूरि:
३९ ,, कणसूरि:	५३ ,, सिद्धसूरि:
४० ,, देवगुप्तसूरि:	५४ ,, कणसूरि:
४१ ,, सिद्धसूरि:	५५ ,, देवगुप्तसूरि:
४२ ,, कणसूरि	५६ ,, सिद्धसूरि:
४३ ,, देवगुप्तसूरि:	५७ ,, कणसूरि:
४४ ,, सिद्धसूरि:	५८ ,, देवगुप्तसूरि:
४५ ,, कणसूरि:	५९ ,, सिद्धसूरि:
४६ ,, देवगुप्तसूरि:	६० ,, कणसूरि:
४७ ,, सिद्धसूरि:	६१ ,, देवगुप्तसूरि:
४८ ,, कणसूरि:	६२ ,, सिद्धसूरि:
४९ ,, देवगुप्तसूरि:	६३ ,, कणसूरि:
५० ,, सिद्धसूरि:	६४ ,, देवगुप्तसूरि:

(६४)

जैन जाति महोदय प्र. तीसरा

६५ ,, सिद्धसूरिः	७५ ,, कक्कसूरिः
६६ ,, कक्कसूरिः	७६ ,, देवगुप्तसूरिः
६७ ,, देवगुप्तसूरिः	७७ ,, सिद्धसूरिः
६८ ,, सिद्धसूरिः	७८ ,, कक्कसूरिः
६९ ,, कक्कसूरिः	७९ ,, देवगुप्तसूरिः
७० ,, देवगुप्तसूरिः	८० ,, सिद्धसूरिः
७१ ,, सिद्धसूरिः	८१ ,, कक्कसूरिः
७२ ,, कक्कसूरिः	८२ ,, देवगुप्तसूरिः
७३ ,, देवगुप्तसूरिः	८३ ,, सिद्धसूरिः
७४ ,, सिद्धसूरिः	८४ ,,



